सावल दास
बनाम
बिहार राज्य

(Sawal Das
Vs.
State of Bihar)

(7 अगस्त, 1974)

(न्या० एस० एच० बेग और पी० एन० भगवती)

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1898 (1898 का 5)—धारा 423(1) (घ)—दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन हत्या के अपराध के लिए दोषसिद्ध और दण्डादिष्ट किया जाना—इसके साथ-साथ धारा 201 के अधीन भी दोषसिद्ध किया जाना किन्तु पृथक् दण्डादेश पारित न किया जाना—अपील करने पर धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि का अपास्त कर दिया जाना किन्तु धारा 201 के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखते हुए दण्डादेश की अवधि का नियत किया जाना—अपील न्यायालय दण्डादेश की अवधि नियत करने के लिए ऐसा पारिणामिक या आनुषंगिक आदेश पारित कर सकता है जैसा वह उचित और न्यायसंगत समझे।

अपीलार्थी, उसके पिता और उसकी सौतेली मां को भारतीय दण्ड संहिता, 1898 की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपीलार्थी की पत्नी की हत्या करने के लिए तथा हत्या के बाद उसके शव को, यह जानते हुए कि उसकी हत्या की गई है, नष्ट करने के लिए धारा 201 के अधीन दोषसिद्ध किया गया तथा पूर्वकथित अपराध के लिए दोनों को आजीवन कारावास का दण्डादेश दिया गया। किन्तु विचारण न्यायालय ने पश्चात्कथित धारा के अधीन की गई दोषसिद्धि के लिए अलग से कोई भी दण्डादेश इस कारण से पारित नहीं किया क्योंकि धारा 302/34 के अधीन उन्हें दण्डादिष्ट किया जा चुका है। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की सौतेली मां के दण्डादेश को अपास्त कर दिया तथा धारा 302/34 के अधीन उसके पिता की दोषसिद्धि को अपास्त करते हुए उसे धारा 201 के अधीन दोषसिद्ध कर दिया और तीन वर्ष का कठिन कारावास भुगतने का आदेश दिया। साथ ही उसने धारा 302/34 के अधीन की गई अपीलार्थी की

दोषसिद्धि को बदल दिया और धारा 302 और 201 के अधीन की गई दोषसिद्धि को कायम रखते हुए यह आदेश दिया कि दोनों धाराओं के अधीन दिए गए दण्डादेश साथ-साथ चलेंगे ।

अपीलार्थी ने उच्चतम न्यायालय में विशेष इजाजत लेकर अपील फाइल की; उसने धारा 302 के अधीन की गई उसकी दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया किन्तु धारा 201 के अधीन वाली दोषसिद्धि को कायम रखा । उस समय अपीलार्थी ने इस तकनीकी आधार पर अपनी दलील पेश की कि चूंकी धारा 201 के अधीन की गई दोषसिद्धि के विरुद्ध राज्य ने कोई भी अपील फाइल नहीं की है और विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय दोनों ने ही उस धारा के अधीन की गई दोषसिद्धि के लिए कोई भी दण्डादेश नहीं दिया है, अतः अपील में उच्चतम न्यायालय धारा 201 के अधीन वाली दोषसिद्धि के लिए कोई भी दण्डादेश पारित नहीं कर सकता । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—जब किसी व्यक्ति का विचारण किसी अपराध के लिए किया जाता है और उसे दोषसिद्ध किया जाता है, तो न्यायालय का यह कर्त्तव्य होता है कि वह उस पर ऐसा दण्डादेश अधिरोपित करे जैसा कि उसके लिए विहित किया गया है । विधि के अधीन किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में ऐसा अनुध्यात नहीं है कि उसे उस अपराध के लिए दण्डादेश अधिरोपित किए बिना दोषसिद्ध किया जाए । जब विचारण मजिस्ट्रेट संबंधित धारा के अधीन अपीलार्थी को दोषसिद्ध करता है तो स्पष्टतः उसका यह कर्त्तव्य होता है कि वह दण्डादेश अधिरोपित करे । जब अपीलार्थी ऐसे मामले का पुनरीक्षण करने के संबंध में उच्च न्यायालय में आवेदन फाइल करता है और यह दलील देता है कि संबंधित धारा के अधीन की गई दोषसिद्धी अवैध है, तो उच्च न्यायालय का यह कर्त्तव्य है कि वह संबंध धारा के अधीन दण्डादेश अधिरोपित करे । ऐसी परिस्थितियों में दण्डादेश पारित करने की शक्ति उस विधि से प्राप्त की जाती है जिसमें कि यह अधिनियमित किया गया हो कि दोषसिद्ध होने पर अभियुक्त पर दण्डादेश अधिरोपित किया जाएगा और यह ऐसी शक्ति है जिसका प्रयोग उन सभी न्यायालयों द्वारा किया जा सकता है और किया भी जाना चाहिए जिन्हें यह विनिश्चत करने की अधिकारिता होती है कि अभियुक्त दोषी है या नहीं है, और जो यह निष्कर्ष निकालते हैं कि वह दोषी है । वास्तव में धारा 423 (1) (घ) के अधीन यह शक्ति अपील न्यायालय के लिए परिरक्षित है । जब अपील किए जाने पर कोई दोषसिद्धि अभिपुष्ट कर दी जाती है किन्तु विचारण मजिस्ट्रेट द्वारा कोई दण्डादेश नहीं दिया जाता है तब दण्डादेश का दिया जाना दोषसिद्धि की अभिपुष्ट का परिणामिक

और आनुषंगिक होता है और विधि के अधीन ऐसा आदेश पारित किया जाना न्यायसंगत और उचित है। (पैरा 9)

वर्तमान मामले की परिस्थितियों में ऐसा पारिणामिक आदेश जो दण्डादेश अधिरोपित करता है और जिसे उच्च न्यायालय ने भूल से पारित कर दिया था, इस न्यायालय द्वारा भी पारित किया जा सकता है। (पैरा 10)

अनुसरित निर्णय

		पैरा
[1955]	(1953) 2 एस० सी० आर० 1049, 1054-55 : **जयराम विठोबा और एक अन्य** बनाम **मुम्बई राज्य** (Jayaram Vithoba and Another *Vs.* State of Bombay);	9

दाण्डिक अपीली अधिकारिता : 1974 की दाण्डिक अपील संख्या 19.

न्यायालय के तारीख 9 जनवरी, 1974 वाले आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण के लिए आवेदन।

1972 की दाण्डिक अपील संख्या 70.

1968 की दाण्डिक अपील संख्या 90 में पटना उच्च न्यायालय, पटना के तारीख 16 सितम्बर, 1971 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई अपील।

पिटीशनर की ओर से	सर्वश्री आर० जीतुमलानी, एस० एन० मिश्र और एस० एस० जौहर
प्रत्यर्थी की ओर से	श्री आर० सी० प्रसाद

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति एम० एच० बेग ने दिया।

न्यायाधिपति बेग—

एक दाण्डिक अपील के सम्बन्ध में 19-1-1974 को हमने जो आदेश पारित किया था, उसका पुनर्विलोकन करने के लिए यह आवेदन विशेष इजाज़त लेकर पेश किया गया है।

2. आवेदक का विचारण, उसके पिता जमुना प्रसाद और सौतेली मां कलावती देवी के साथ किया गया था और उसे अपनी पत्नी चन्दा देवी की हत्या करने के लिए दोषसिद्ध किया गया था; यह अभिकथित किया गया है कि चन्दा

1971(8) eILR(PAT) SC 48

देवी का कलावती के साथ प्रायः लड़ाई-झगड़ा हुआ करता था। आवेदक और उसके पिता तथा कुछ अन्य व्यक्तियों पर चन्दा देवी की हत्या के बाद उसके शव को यह जानते हुए कि उसकी हत्या की गई है, नष्ट करने के लिए भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन आरोप लगाया गया था।

3. विचारण न्यायालय ने आवेदक सावल दास, उसके पिता जमुना प्रसाद और उसकी सौतेली मां कलावती को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन हत्या का अपराध करने के लिए दोषसिद्ध किया और उनमें से प्रत्येक को आजीवन कठिन कारावास के लिए दण्डादिष्ट किया। आवेदक और उसके पिता को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया था, किन्तु इस तथ्य की दृष्टि से कि उन्हें भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304/34 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है, इस अपराध के लिए उन पर कोई पृथक् दण्डादेश अधिरोपित नहीं किए गए थे।

4. दोषसिद्ध व्यक्तियों द्वारा अपील किए जाने पर उच्च न्यायालय ने दोनों अपराधों के संबंध में कलावती की दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया और यह आदेश दिया कि उसे मुक्त कर दिया जाए। उसने आवेदक के पिता जमुना प्रसाद की अपील को भी इस सीमा तक मंजूर कर लिया कि उसने भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302/34 के अधीन उसकी दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया, किन्तु उसने भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन उसकी दोषसिद्धि को कायम रखा और उसे 3 वर्ष के कठिन कारावास से दण्डादिष्ट किया। उसने भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302/34 के अधीन आवेदक की दोषसिद्धि को भारतीय दण्ड संहिता की मात्र धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि के रूप में परिवर्तित कर दिया और आजीवन कारावास के दण्डादेश को कायम रखते हुए निम्नलिखित मत व्यक्त किया—

"अपीलार्थी सावल दास की अपील खारिज की जाती है, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन उसकी दोषसिद्धि और दण्डादेश को कायम रखा जाता है और हत्या के अपराध के लिए उस पर अधिरोपित दण्डादेश को भी कायम रखा जाता है किन्तु भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302/34 के अधीन उसकी दोषसिद्धि को मात्र धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि के रूप में परिवर्तित किया जाता है। दण्डादेश साथ-साथ चलेंगे जैसे कि निचले न्यायालय द्वारा पहले ही विनिश्चित किया गया है।"

5. स्पष्टतः उच्च न्यायालय ने यह गलत धारणा बना ली थी कि आवेदक सावल दास को विचारण न्यायालय ने भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के

अधीन तथा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन न केवल दोषसिद्ध ही किया गया था, बल्कि दण्डादिष्ट भी किया था। जैसा कि पहले मत व्यक्त किया जा चुका है, विचारण न्यायालय ने अलग से कोई भी दण्डादेश पारित नहीं किया जो कि वह कर सकता था। उसने इस बात को नजरअंदाज कर दिया कि विधि के अनुसार प्रत्येक अपराध के लिए अलग से दण्डादेश पारित किया जाना चाहिए, भले ही दण्डादेश साथ-साथ चलने वाले हों, क्योंकि न्यायालय दोषसिद्धि को ऐसे अपास्त कर सकता है जैसा कि इस मामले में किया गया है जिससे कि ऐसी स्थिति में अलग से दण्डादेश दिए जाने की आवश्यकता अवश्य उत्पन्न हो जाए।

6. इस न्यायालय ने आवेदक के पिता जमुना प्रसाद के उस आवेदन को खारिज कर दिया जो भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन उसकी दोषसिद्धि और दण्डादेश के विरुद्ध अपील करने की विशेष इजाजत के लिए किया गया था, उसने अपीलार्थी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन अपनी दोषसिद्धि और दण्डादेश की शुद्धता के अलावा किसी और मुद्दे पर विवाद करने की इजाजत देने से भी इंकार कर दिया। पाए गए तथ्यों से उद्भूत होने वाली उन अनिश्चितताओं पर विचार करने के बाद कि क्या इन दोनों व्यक्तियों ने जिन पर हत्या करने का आरोप लगाया है या उनमें से केवल एक ने और यदि ऐसी बात है तो उनमें से किसने, ऐसे कार्य किए थे जिनके आधार पर उस पर अकेले हत्या का दायित्व मढ़ा जा सके, इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि आवेदक को उस अनिश्चितता का फायदा दिया जाना चाहिए क्योंकि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 के अधीन लगाया गया आरोप साबित नहीं हो पाया है। निश्चित रूप से यह बात नहीं कही जा सकती कि क्या आवेदक ने अपनी पत्नी चन्दा देवी की हत्या करने में वास्तव में भाग लिया था और यदि ऐसा है, तो कितना भाग लिया था। फिर भी इस न्यायालय को यह विश्वास हो गया था कि आवेदक, उसके पिता और उसकी सौतेली मां को अपने मकान के कमरे में चन्दा देवी का पीछा करते हुए देखे जाने के बाद उसकी हत्या की गई थी। किसी ने भी यह नहीं बताया है कि कमरे के भीतर वास्तव में क्या हुआ था।

7. भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन आवेदक की दोषसिद्धि की अभिपुष्टि करते हुए, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन उसकी दोषसिद्धि को अपास्त करने के आवश्यक परिणाम के तौर पर, चूंकि इस दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील के लिए विशेष इजाजत नहीं दी गई थी, इसलिए इस न्यायालय को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन दण्डादेश के संबंध में कोई आदेश पारित करके मामले का निपटारा करना पड़ा था। वास्तव में

1971(8) eILR(PAT) SC 48

अपील की सुनवाई के दौरान इस संबंध में कि ऐसी स्थिति में समुचित दण्डादेश क्या हो सकता है, कुछ बहस की गई थी।

8. अब आवेदक ने तकनीकी मुद्दे के आधार पर इस न्यायालय में आवेदन फाइल किया है। वह यह है कि चूंकि राज्य ने भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन अलग से दण्डादेश पारित करने में विचारण न्यायालय की असफलता के विरुद्ध या उच्च न्यायालय द्वारा इस गलत धारणा पर कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन किसी अपराध के लिए अपीलार्थी पर कोई दण्डादेश वास्तव में पारित किया जा चुका है, दण्डादेश विनिर्दिष्ट करने में असफलता के विरुद्ध कोई भी अपील फाइल नहीं की गई है, इसलिए यह न्यायालय भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन आवेदक पर कोई दण्डादेश पारित नहीं कर सकता।

9. आवेदक के विद्वान् काउन्सेल ने **जयराम विठोबा और एक अन्य बनाम मुम्बई राज्य**[1] वाले मामले की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया, जो बॉम्बे प्रिवेन्शन ऑफ गैम्बलिंग ऐक्ट (मुम्बई द्यूत निवारण अधिनियम) के अधीन वाला मामला था। उसमें इस न्यायालय ने पृष्ठ 1054-55 पर) यह अधिकथित किया था —

> "जब किसी व्यक्ति का विचारण किसी अपराध के लिए किया जाता है और उसे दोषसिद्ध किया जाता है, तो न्यायालय का यह कर्त्तव्य होता है कि वह उस पर ऐसा दण्डादेश अधिरोपित करे जैसा कि उसके लिए विहित किया गया है। विधि के अधीन किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में ऐसा अनुध्यात नहीं है कि उसे उस अपराध के लिए दण्डादेश अधिरोपित किए विना दोषसिद्ध किया जाए। जब विचारण मजिस्ट्रेट ने धारा 5 के अधीन प्रथम अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया, तब स्पष्टतः उसका यह कर्त्तव्य था कि वह दण्डादेश अधिरोपित करता। धारा 4(क) के अधीन दण्डादेश अधिरोपित करके उसने स्पष्टतः यह विचार किया कि धारा 5 के अधीन तद्वत् दण्डादेश अधिरोपित करने की और यह निदिष्ट करने की कि दोनों ही दण्डादेश साथ-साथ चलेंगे, कोई भी आवश्यकता नहीं है। किन्तु यथार्थतः ऐसा आदेश पारित किया जाना ही उचित था। उसके बाद अपीलार्थी ने उस मामले का पुनरीक्षण करने के सम्बन्ध में उच्च न्यायालय में आवेदन फाइल किया और यह दलील दी कि धारा 5 के अधीन उनकी दोषसिद्धि अवैध है। उच्च न्यायालय ने उस प्रश्न पर गुणागुण के आधार पर विचार किया और उन्हें उस धारा के अधीन दोषी पाया।

[1] (1955) 2 एस० सी आर० 1049,

उच्च न्यायालय का यह कर्त्तव्य था कि वह धारा 5 के अधीन दण्डादेश अधिरोपित करता और यथार्थत: यही बात उसने की भी है। उन परिस्थितियों में दण्डादेश पारित करने की शक्ति उस विधि से प्राप्त की जाती है जिसमें यह अधिनियमित किया गया हो कि दोषसिद्धि होने पर अभियुक्त पर दण्डादेश अधिरोपित किया जाएगा और यह ऐसी शक्ति है जिसका प्रयोग उन सभी न्यायालयों द्वारा किया जा सकता है और किया भी जाना चाहिए जिन्हें यह विनिश्चित करने की अधिकारिता होती है कि क्या अभियुक्त दोषी है या नहीं और जो यह निष्कर्ष निकालते हैं कि वह दोषी है। हमारी राय यह है कि धारा 423(1) (घ) के अधीन यह शक्ति अपील न्यायालय के लिए परिरक्षित है, उस धारा के अधीन यह अधिनियमित है कि न्यायालय 'कोई संशोधन या कोई पारिणामिक या आनुषंगिक आदेश, जो न्यायसंगत या उचित हो, कर सकेगा।' 'जब अपील किए जाने पर कोई दोषसिद्धि अभिपुष्ट कर दी जाती है किन्तु विचारण मजिस्ट्रेट द्वारा कोई दण्डादेश नहीं दिया जाता है तब दण्डादेश का दिया जाना दोषसिद्धि की अभिपुष्टि के पारिणामिक और आनुषंगिक रूप में होता है और विधि के अधीन ऐसा आदेश पारित किया जाना न्यायसंगत और उचित है। हम **इब्राहिम** बनाम **एम्परर** (ए० आई० आर० 1940 मुम्बई 129) वाले मामले में व्यक्त इस मत से सहमत नहीं हैं कि ऐसे आदेश का अर्थ दण्डादेश में अभिवृद्धि करना होगा।"

10. हम यह समझते हैं कि ऊपर उद्धृत मामलों में जो कुछ भी अभिनिर्धारित किया गया है, वही हमारे समक्ष वाले इस मामले को भी लागू होता है। इससे यह दर्शित होता है कि उपर्युक्त परिस्थितियों में ऐसा पारिणामिक आदेश जो दण्डादेश अधिरोपित करता है और जिसे उच्च न्यायालय ने भूल से पारित कर दिया था, इस न्यायालय द्वारा भी पारित किया जा सकता है।

11. आवेदक की यह दलील भी कि चूंकि उच्च न्यायालय या विचारण न्यायालय द्वारा कोई विशिष्ट दण्डादेश अधिरोपित नहीं किया था, इसलिए आवेदक के बारे में यह समझा जाना चाहिए कि उसे दण्डादिष्ट किया ही नहीं गया था, सही नहीं है। जो आदेश पारित किए गए हैं उनसे यह दर्शित होता है कि आवेदक को न केवल भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था बल्कि यह आदिष्ट किया गया था कि उस अपराध के लिए उसका जो दण्डादेश है, वह आजीवन कारावास के साथ-साथ ही चलेगा। केवल दण्डादेश की कालावधि निश्चित नहीं की गई थी। स्पष्ट रूप से यह बात

गलत थी। वह दण्डादेश भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन दण्डादेश की सम्पूर्ण कालावधि के साथ-साथ नहीं चल सकता था। अतः जब उस दण्डादेश को अपास्त किया गया था तब भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन दण्डादेश की कालावधि आवश्यक परिणाम के तौर पर निश्चित की जानी थी।

12. हमारे समक्ष इस बात पर भी जोर दिया गया कि हमने भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन अधिरोपित किए जाने वाले दण्डादेश के प्रश्न पर आवेदक की सुनवाई नहीं की। हमने अपने निर्णय में यह पाया है कि यह बात की गई थी। किन्तु हमने राज्य को सूचना जारी करने के बाद आवेदन का पुनर्विलोकन करते समय आवेदक की पुनः सुनवाई की है। हमें ऐसे पर्याप्त आधार दिखाई नहीं देते हैं जिनके आधार पर हम 7 वर्ष के कठिन कारावास और 1,000 रुपये के जुर्माने तथा जुर्माने का संदाय न करने की स्थिति में, 6 मास की अतिरिक्त अवधि के कारावास के दण्डादेश में परिवर्तन करें। अतः यह पिटीशन एतद्द्वारा खारिज किया जाता है।

पिटीशन खारिज किया गया।

श्री०/दि०